शोध संचयन
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
Vol. 14
Issue 1&2
15July 2023

दादूपंथी संत नारायणदास के साहित्य में मानव दर्शन

बीज शब्द :

संत नारायणदास,मानव-दर्षन, दादूपंथ, पंथ-निरपेक्षता, सांप्रदायिक-सद्भाव, सामाजिक समानता।

भक्ति चेतना को लोक कल्याणकारी चेतना बनाने हेतु, मानव धर्म को निरंतर मानव हित के लिए आडंबर रहित बनाने हेतु संतों का जन्म हुआ। जिन्होंने निम्न समझी जाने वाली जातियों को पिछड़ी से अगड़ी बनाने का अथक प्रयास किया। कबीर, नानक, एवं दादूदयाल आदि की परंपरा में पंथनिरपेक्ष दादूपंथी संत नारायण ादास ने मानव धर्म को आधार बनाकर अपने ग्रंथों एवं उपदेशों में लोक कल्याण एवं समन्वय की भावना को सर्वोपरि दर्जा प्रदान किया। कवि सगुण-निर्गुण किसी एक धारा, विचार या वाद से जुड़कर नहीं चले उनका जुड़ाव मात्र मानव धर्म से ही रहा। जीवन में समाज से भर्त्सना सहते हुए भी समाज सुधार हेतु प्रयास किया। संपूर्ण मानव जाति को प्रेम ,समानता एवं भाईचारे का पाठ पढ़ाने का सद्प्रयास अपने साहित्य के माध्यम से किया।

*****

डॉ. रेखा शेखावत, सहायक प्रोफेसर-हिन्दी,
राजकीय महाविद्यालय सतनाली (महेन्द्रगढ़, हरियाणा)।
Email- dr.rekhabikaner@gmail.com

दादूपंथी संत नारायणदास के साहित्य में मानव दर्शन

भक्तिकालीन युगीन धारा का अविर्भाव जिस समय हुआ वह मुगल शासन का चर्मोत्कर्ष था। तत्कालीन समय में भक्ति की विभिन्न धाराओं का लोक-मंगलकारी व समन्वयवादी रूप प्रचलित था।मुगल काल में घोर नैरारय के समय जनता ने जिस भक्ति का आश्रय लिया उसी के सहारे उनके जीवन की रक्षा होती रही।अनवरत ऐसी ही अवधारणा जनमानस की बनती चली गई।विभिन्न संप्रदायों एवं पंथों के आचरणानुसार लोगों में जीवन जीने की ललक जागृत हुई।जहाँ एक ओर प्रताडना सहते हुए उन्होंने स्वंय अपने ज्ञान की रक्षा की एवं अपने परिवार समाज तथा संपूर्ण मानवता को प्राथमिकता देते हुए ईष्वर की उस षक्ति के प्रति अगाध विष्वास लोगों में पैदा किया।संपूर्ण भक्ति आंदोलन मानवतावाद की मिशाल कायम करता नजर आता है।संत दादू दयाल कहते है -

"ज्यों ज्यों पीवे राम रस त्यों त्यों बढे पियास।
ऐसा कोई एक है ,बिरला दादू दास ।।322।।"[1]

इस प्रकार संतों ने आम जनता का ध्यान एकाग्रता की ओर अग्रसर किया, ताकि वे अपनी यातनाओं को विस्मृत कर सकें।संतों ने मानवता के उद्धार हेतु अपनी नित्यचर्या में आराध्य की उपासना करने का संदेश दिया है।"दैनिक व्यवहार एवं आध्यात्मिक अनुभूति के असामंजस्य के ही कारण वे बहुधा संसार से विरक्त बन जाया करते है और उसी को सब कुछ मानते हुए उसके स्मरण का उपदेश भी दिया है।इसका प्रधान कारण कदाचित यही हो सकता है कि सत्य का उतना ही अंश उसके लिए परिचित है और उसी की अनुभूति उसके लिए लाभदायक भी सिद्ध हो सकती है।"[2]

संत परंपरा में संत दादू का महत्वपूर्ण स्थान है।कबीर की भांति समदर्शी संत दादू ने सभी धर्म-संप्रदायों एवं जातियों के मनुष्यों हेतु पंथ के द्वार खोले।इनकी दादू वाणी में कोई भी साम्प्रदायिक या सामाजिक बंधन दिखाई नहीं देता सभी को प्रेम का संदेश देते हुये दादू कहते हैं कि -

" प्रीति जु मेरे जीव की , पैठी पिंजर मांहि।
रोम-रोम पिव -पिव करे, दादू दूसर नांहि ।। "134।।[3]

मनुष्य के हृदय को लक्ष्य करके कहते है कि रोम-रोम से प्रियतम प्रभु का नाम ही सुनाई देता है। प्रेम की लय से यह सारा संसार एक धूरी पर घूम रहा है। प्रेम व सौंदर्य से सृष्टि का कोई भी अंग अछूता नहीं है। मानव प्रेम सर्वोपरि हैं।मनुष्य की प्रेममयी अनुभूति उसके कानों के माध्यम से प्रवेश करती हुई ह्रदय तक पहुँच कर अपनी पैठ बनाती है।अपने इष्ट तक पहुँचने का मार्ग भी वही है।दादू कहते है -

दादू इष्क अलह की जाति है, इष्क अलह का अंग।
इष्क अल्लाह वजूद है, इष्क अलह का रंग।।152।।[4]

साम्प्रदायिक वैमनस्य को दूर करने वाली ये पंक्तियां दादू जी ने अकबर के प्रश्नों के उत्तर में कहीं थी। अर्थात प्रेम ईश्वर का दूसरा नाम है।यह मानव प्रेम मानवतावाद की नींव है। सभी संत कवियों का दर्शन, प्रेम से ही शुरू हुआ है।वह लौकिक से अध्यात्मिक रूप धारण कर चरम तक पहुँचता है एवं अपने प्रियतम का साक्षात्कार करता है।

"ढाई आखर प्रेम का पढै सो पंडित होय। "की घोषणा करते हुए कबीर ने संसार का सारतत्व प्रेम माना।जहाँ अहंकार से उपजे समस्त विकारों का लेश मात्र तक नहीं रहता। " इस प्रेम की अर्थ-व्याप्ति गहरी है और इसका आधार ईमानदार संवेदन है जो विचार-आचार की मैत्री के लिए आवश्यक है तथा कविता-कर्म के लिए भी।कबीर जिस मध्यकाल में उपस्थित है, वहाँ शास्त्र एक ओर पुरोहितवाद से जुड़ जाता है,दूसरी ओर वह अहंकार का प्रतीक बनता है।"[5]

कबीर के समान दादू भी आत्मा की मुक्ति और उल्लास के कवि है।जीवानुभवों में कबीर के समान दादू भी जीवन सत्य की गहराई में पैठने वाले है।सत्य, अहिंसा, त्याग ,अपरिग्रह एवं पर्यावरण के प्रति प्रेम का भाव धारण करने वाले संत दादू निर्गुण के उपासक रहे लेकिन किसी भी पंथ-वाद ,सम्प्रदाय या जाति का निशेध कहीं नहीं करते हैं।दादू कहते है कि जो पंथों के फेर में पड़ गये वे अपने ईष्ट को कभी प्राप्त नहीं कर पाये

"दादू पंथो पड़ गये, बपूरे बारह-बाट।
इनके संग न जाइये, उलटा अविगत घाट।।"[6]

दादू सम्प्रदाय में दादू के शिष्यों की दीर्घ परम्परा रही है।जिनमें सगुण व निर्गुण सभी प्रकार के साधु हुये है। इस परम्परा में पुष्कर के संत नारायणदास का प्रादुर्भाव हुआ। स्वामी नारायणदास जमात उदयपुर के अखाड़े,लक्ष्मीदास जी के स्थान सनौधा में दीक्षित हुये थे। ये धनराम जी के शिष्य थे।जमात का त्याग करने के बाद ये विरक्तों में प्रेवश कर गये। भ्रमणोपरांत ये स्थायी रूप से पुश्कर में रहने लगें। कृष्ण -कृपा कुटीर नाम से इनका साधना धाम बना हुआ है।विक्रम संवत 1960 में रामनवमी को इनका जन्म हुआ था।मूल नक्षत्र में पैदा होने के बाद इन्हें दादू द्वारे में भेंट कर दिया गया।इनका विधिवत अध्ययन नहीं हुआ जीवन में संघर्ष के पश्चात आध्यात्मिक उन्नति से शिक्षा -दीक्षा भी हुई एवं अनेक ग्रंथों की रचना भी की।इन्हीं संत के साहित्य पर मेरा पहला शोध होने से मुझे बहुत सारी कठिनाईयों के साथ कुछ जिम्मेदारियाँ भी लेनी पड़ी।इनके साहित्य को इन्टरनेट तक आने में बहुत समय लगने की सम्भावना है।इनका साहित्य समाज को नैतिकता की नवचेतना प्रदान करने में कारगार साबित हो सकेगा।

संत नारायणदास ने ईश्वर के सगुण एवं निर्गुण दोनों रूपों का वंदन किया है।जहां एक ओर वे श्री स्तोत्र सुधाहृद में परमात्मस्वरूप के 14 उपास्यों के 64 स्त्रोत्र में परमेश्वर से लेकर शंकर ,शक्ति, सूर्य, राम, कृष्ण, हनुमत सहित गुरूनानक, दादू सदगुरू आदि सभी की स्तुति करते है वहीं निर्गुण परब्रह्म का संदेश भी देते नजर आते है।ये मनहरछंद में अपनी बात दादू अष्टपदी में रखते हुये कहते है-

"मोह-मद ममता विशमता के हिये घर, ऐसे जीव जाने कहां भक्ति भव कन्त की ।

नारायण बोध को विचार कर देखा नीके, षोक हर सुखद षरण दादू संत की।।"[7]

आधुनिक समय में संतों का दर्शन सम्पूर्ण विश्व की विकृतियों को दूर करने हेतु प्रासंगिक है।सुधि आलोचकों ने संत दर्शन पर मुस्लिम परंपरा का प्रभाव भी माना है।दूसरी ओर अन्य आलोचक सनातन परंपरा की देन मानते है।वैदिक काल से लेकर संत साहित्य परम तत्व की अवधारणा को धारण किये हुए है।संत काव्य पर अद्वैत दर्शन का प्रभाव है।साथ ही भारतीय दर्शन का पूर्ण प्रभाव परिलक्षित होता है। कबीर ,दादू, सुन्दरदास सहित रज्जब एवं दादूपंथी संत नारायणदास पर भी इसका पूर्ण प्रभाव दिखाई देता है।नारायण दास ने अपने उपदेशों एवं भावपूर्ण भजनों के माध्यम से लोक को जीवंतता का संदेश दिया है वे कहते है कि -

"जो मांहि देखे ज्ञान से, निज मध्य प्रभु को पाय है।
वह अगम अविचल धाम को, संशय रहित हो जाय है।
फिर सच्चिदानन्द ज्योति में, निज आत्म ज्योति मिलाय है।।"[8]

संत नारायणदास का साहित्य मानव को जीवन जीने का संदेश देता है।परमात्मा का वास सर्वत्र है।प्रत्येक प्राणी में वह प्राणरुप में निवास करता है अत: मानव से प्रेम करना ही परमात्मा को सहज रूप में प्राप्त करना है।हिंदी साहित्य की भूमिका में हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते है कि "प्रेम ही पुरूषार्थ है।"दादू कहते है,प्रेम भगवान की जाति है, प्रेम ही भगवान की देह है।..... कबीरदास कहते है कि स्वामी और सेवक एकमात्र है, दोनों मन ही मन (प्रेम से ही) मिलते है।वह चतुराई से प्रसन्न नहीं होता , मन के भाव से रीझता है।....भक्त और भगवान की तरह भक्ति भी अपरंपार महिमामयी है।दादू दयाल ने कहा है कि जैसे राम अपार है ,भक्ति भी उसी प्रकार अगाध है। .....जिस प्रकार राम अविगत है, भक्ति भी उसी प्रकर अलेख्य है, दोनों की कहीं सीमा नहीं है। यह षेश हजार मुँह से कह रहे है।राम जैसे निर्गुण हैं, भक्ति वैसी ही निरंजन है। [9]

संत नारायणदास ने सगुण एंव निर्गुण दोनों ही मार्गों को भक्ति के लिए समान माना है। तुलसीदास की "जाकि रही भावना जैसी" पंक्ति यहाँ सार्थक प्रतीक होती है।अजमेर जैसे साम्प्रदायिक सद्भावना स्थल पर रहते हुए, पंथ-निरपेक्षता का भाव धारण कर कहते है कि भक्ति का कोई भी मार्ग हो मानव के कल्याणार्थ ही कर्म होने चाहिए।आत्मिक उन्नति ,सदाचरण पर बल, गुरू का महत्व, ब्राहा-आडम्बरों का विरोध , साम्प्रदायिक सौहार्द्र सहित जाति-पाति,भेद-भाव से ऊपर उठकर संत भाव को धारण करने का जीवन दर्षन अपने साहित्य के माध्यम से सज्जनों के समक्ष प्रस्तुत किया है।ये कहते है कि -

"औषधि कर निज नाश पराये क्लेश को ।हरती है यह बात ज्ञात सब देश को।

तब ही प्रिय वह हुई सकल संसार की ।महिमा है सु प्रत्यक्ष यही उपकार की।।"[10]

आ.परशुराम चतुर्वेदी कहते है कि " वास्तव में हमे कबीर साहब के सहज धर्म वा साधारण धर्म के अन्तगर्त जन्मान्तर और कर्मवाद तथा भक्तिवाद के अतिरिक्त नाथ पंथियों के योगवाद , जैनियों के अहिंसावाद, सहजवादियों के सहजवाद वा मुसलमानों के एकेष्वरवाद तथा सूफियों के रहस्यवाद आदि अनके मतों के प्रभाव स्पष्ट रूप में लक्षित होते है,जिनके आधार पर उन्हें कभी - कभी एक निरा समन्वयवादी कहने की प्रवृति होती है।"[11]

संत धारा का मानव दर्शन दीर्धजीवी एवं शाश्वत है।संत नारायण ादास ने अपने उपदेशों के माध्यम से अन्याय , अभिमान ,अनाचार , कुसंगति ,स्वार्थपरता आदि सभी को त्याज्य कहा है।वे गुरू की महत्ता,कर्म,एकाग्रता,कर्तव्य शीलता,दान दया, परोपकार,पुरूषार्थ, पितृ भक्ति,प्रेम एवं उत्सव से जीवन सौंदर्य जैसे सार्थक विषयों पर लिखते हुए संदेश देते है -

"परउपकारी आयु निज,दे करते उपकार।
बती प्रकाष देत है, अपने को भी जार।।"[12]

'प्रवचन पीयूष' नामक अपने ग्रंथ में 441 विषयों पर उपदेश दिया है। इनमें मनुष्य की जीवन दृष्टि में समष्टि का भाव व्याप्त करने के सुझाव दिये है।संत ने सत्संग के माध्यम से स्त्रियों व पुरूषों की सभी समस्याओं को दूर करने का प्रयास किया है।एक स्थान पर संत प्रभु के प्रेम का रंग चढ़ने पर संसार के सभी रंग फीके लगने का भाव बोध देते हैं-

"प्रभु प्रेम रंग चढ़ जाय तब,फीके लगे सब रंग है।
तल्लीन मन उस में रहे,छोडं सभी भाव ढंग है।।"[13]

मनुष्य जीवन प्रेम व सौंदर्य की शक्ति पर आस्थावान होकर आगे बढ़ता है काव्य मे जीवंतता के महत्व को प्रतिपादित करते हुये युवा कवि डॉ. प्रमोद कुमार तिवारी ने " विज्ञान का अंध ेरा और कविता का उजाला" शीर्शक अपने लेख में कहा है कि " जितना हम मनुश्य के करीब पहुँचते जाते है।उतना ही साहित्य खासतौर से कविता मजबूत होती जाती है।भक्तिकाल से लेकर छायावाद तक की हिंदी कविता इस बात का गवाह रही है।यहाँ तक कि यह मानवीय जिजीविशा और कविता के प्रति मनुष्य मात्र

के लगाव का ही प्रमाण है कि सबसे बुरे समय में, अंधेरे समय में, सबसे अच्छी कविताएँ रची गयी है। "[14]

संतों ने स्वर्णिम काव्य जनता के समक्ष प्रस्तुत किया है।प्रत्येक युग में मनुष्य सुख व दुख का भोग करता हुआ भक्तिकाव्य के माध्यम से स्वंय को संतुलित बनाने का प्रयास करता रहा है, मध्यकालीन बोध का स्वरूप में हजारी प्रसाद द्विवेदी कहते है कि "हमारे दीर्घ इतिहास में तो वे न जाने कितनी बार आये है। आशा का अभ्युदय स्वर्ण युग की कल्पनाओं को बढ़ावा देता है। निराशा और अवसाद का बोध दुखमय और पापाश्रयी युग की कल्पना को प्रोत्साहित करता है।"[15]

वर्तमान में भौतिकता की अंधी दौड़ में मनुष्य ने स्वंय को मशीनी बना दिया हैं।वह अपने परिवार व समाज के लिए एवं अपने लिए समय नहीं निकाल पाता। शरीर को भोजन की नहीं दवाओं की आवश्यकता ज्यादा हो गई है।वह सत -असत, सद्-आचरण,सद्व्यवहार, मान-सम्मान एवं नैतिक मूल्यों को अर्थ लोलुपता में विस्मृत कर चुका है।अपने दायित्वों से विमुख होकर अपने माता -पिता के प्रति कर्तव्यों को निभाना भी छोड़ दिया है।परिवार रहित मानव समाज की कल्पना आज की युवा पीढ़ी पर हावी है,जो विनाष की स्थितियों को जन्म देगी।हमारी संस्कृति की जड़े धीरे-धीरे खोखली हो रही है।आधुनिक समाज इसी बिगडे हुए रूप को आभिजात्य होने की सुखद अनुभूति में प्रफुल्लित हो रहा है। ऐसे दिशा हीन भ्रमित समाज के लिए संत साहित्य का आश्रय आवश्यक है।यह लोक कल्याण एवं मानवीय सहानुभूति सहित युद्व,हिंसा,टकराव,ईष्या,वैमनस्य आदि को शांत कर मानव ह्रदय में प्रेम का बीजवपन कर सुन्दर एवं स्वस्थ मानव समाज का निर्माण करने में सहायक सिद्व होगा। संत दादू दयाल मानव के सर्वोपरि धर्म की व्याख्या करते हुये कहते है कि -

" दादू पाती प्रेम की विरला बांचे कोइ।
वेद पुराण पुस्तक पढ़ै, प्रेम बिना क्या होइ ।।"[16]

दादूपंथी संत मानवतावादी विचारों के पक्षधर हैं।संत विचार ही जीव दया चेतना का विशेष भाव हैं।वह चाहे जड़ हो या चेतन, सभी के प्रति सदय भाव लेकर संत काव्य अग्रगामी बना हुआ है।संत चाहे किसी भी जाति, धर्म या सम्प्रदाय के हों, कितने ही कुलीन क्यों ना हों, वे कुल भाव, जाति भाव, ऊँच-नीच का भेद आदि सभी से बहुत ऊपर होते है।संत सामाजिक संकुचित दायरे से बाहर निकल कर व्यापक जीवन दर्शन का निर्माण करते है।इन्होनें धर्म को संकुचित मानसिकता से निकाल कर, समरसता का भाव मानव जाति में भरने का प्रयास किया है।कवि ने मनुश्य को ईश्वर स्तुति, सुख-दुख, धर्म,दान, दया, सत्य, व अहिंसा आदि विशयों पर शिक्षा देते हुए समाज में व्याप्त साम्प्रदायिक विद्वेश, स्वार्थपरता,अधर्म,अहंकार,काम, क्रोध,मद,लोभ आदि के दुश्प्रभावों से अवगत करवाया है।युगीन मानव के कालुश्य को अपने उपदेषों के माध्यम से स्वच्छ एवं विषुद्ध पंथ-निरपेक्ष समाज की स्थापना करने पर बल देते हैं।जीवन दर्षन की अनुभूति एवं मानव कल्याण की साधना का अथक प्रयास कर, नैतिक मूल्यों को अपने संदेष में सर्वोपरि रखते हैं, जिसकी जरूरत आज के दिषाहीन समाज को सर्वाधिक है।संतों ने मानवतावाद का षंखनाद फूँकते हुये "वसुधैव कुटुम्बकम" का जयघोश अपने साहित्य में किया है।दादूपंथी संत नारायणदास का साहित्य मानव चेतना की अखण्ड़ जोत-जागृत करने हेतु सदैव प्रांसगिक रहेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1.नारायणदास श्री दादूवाणी (टीका)
प्रकाषन श्री दादू दयाल महासभा ,जयपुर
नवम् सेस्करण , 2012, पृश्ठ संख्या - 153

2.चतुर्वेदी परषुराम - संत काव्य प्रकाषन किताब महल , 22 । ,सरोजनी नायडु मार्ग, इलाहाबाद, प्रथम सं: 1952, 2015, पृ से: 11

3.नारायणदास - श्री दादू वाणी (टीका)
प्रकाषन श्री दादू दयाल महासभा ,जयपुर पृ. सं 82

4.नारायणदास - श्री दादूवावाणी(टीका) वही , पृ. स. 85

5.श्री वास्तव परमानन्द (सपाद) - कबीर (पुनर्पाठ पुनमूल्याकन) अभिव्यक्ति प्रकाषन ,इलाहाबाद , संस्करण: 2001, पृ.स. 72

6.नारायणदास - श्री दादू वाणी (टीका)
प्रकाषन श्री दादू दयाल महासभा ,जयपुर पृ. सं 331

7.नारायणदास - श्री स्तोत्र सुधाह्रद -
श्री दादू दयाल महासभा ,जयपुर वि.स. 2026 पृ. सं 193

8.नारायणदास - श्री नारायण कवितावली, प्रका.
श्री दादू दयाल महासभा ,जयपुर वि.स. 2040 पृ. सं 82

9.द्विवेदी हजारी प्रसाद - हिंदी साहित्य की भूमिका ,राजकमल प्रका.
नई दिल्ली , सं. 2006, पृ. सं. 89-90

10.नारायणदास - श्री साधक सुधा, प्रका.
श्री दादू दयाल महासभा ,जयपुर वि.स. 2012 पृ. सं 94

11.द्विवेदी हजारी प्रसाद - कबीर, हिंदी ग्रंथ रत्नाकार कार्यालय
बम्बई, , सं. 1950, पृ. सं. 21

12.नारायणदास - प्रवचन पीयूश ,
श्री दादू दयाल महासभा ,जयपुर पृ. सं 233

13.नारायणदास - श्री नारायण कवितावली, प्रका.
श्री दादू दयाल महासभा ,जयपुर वि.स. 2040 पृ. सं 59

14.तिवारी डॉ. प्रमोद कुमार - आज की जनधारा लेख - "विज्ञान का अंध ेरा और कविता का उजाला" साहित्य वार्शिकी (वर्श - 2 अंक - 2) वर्श - 2023 पृ.स. 138

15.द्विवेदी हजारी प्रसाद - मध्यकालीन बोध का स्वरूप
राजकमल प्रकाषन ,दिल्ली, प्र. सं. 1989, 10वां सवंत 2022 पृ.स.17

16.नारायणदास - (टीका कार) श्री दादूवाणी टीका ,श्री दादू दयाल महासभा ,जयपुर ,षर्मा प्रिन्टर्स ,अजमेर वि. स. 2063, पृ.सृ 79